स्टुअर्ट मेक्ग्रेगर

हिंदी साहित्येतिहास की भिन्न दृष्टि

फ्रांचेस्का ऑर्सीनी

पिछले 19 अगस्त को लम्बी बीमारी के बाद 84 साल की उम्र में आर.एस. मेक्ग्रेगर का केम्ब्रिज, यूके में देहांत हो गया। उनका नाम हिंदी जगत में, विशेषकर विदेश के हिंदी जगत में, उस सम्मान और कृतज्ञता से लिया जाता है जो बड़े-बुजुर्गों के लिए उचित और मुनासिब है। ज़्यादातर लोग उन्हें *ऑक्सफ़र्ड हिंदी-अंग्रेज़ी शब्दकोश* की वजह से जानते हैं, जो पिछले बीस सालों से किसी भी हिंदी पाठक और विद्यार्थी का विश्वसनीय और वफ़ादार साथी रहा है। कुछ ही महीने पहले, वार्सव में मध्यकालीन हिंदी पर हुई लम्बी बैठक में हम एक-दूसरे से पूछ कर होड़ लगा रहे थे कि किसके पास कितने-कितने 'मेक्ग्रेगर' हैं (मेरे पास पाँच हैं, अलग-अलग जगहों पर मेरा इंतज़ार करते हुए; आजकल ऑनलाइन भी मिलता है मगर उलटने-पलटने के लिए किताब अब भी बेहतर है)। व्यक्तिगत रूप से स्टुअर्ट इतने शालीन और आडम्बरहीन थे कि केम्ब्रिज में कम ही लोग उनके काम और भाषाविद् के रूप में उनकी उपलब्धियों से परिचित थे, हालाँकि उनसे मिलने और उनकी नीली पारदर्शी आँखों को देखने पर तुरंत समझ में आता था कि ये बहुत सीधे और ईमानदार आदमी हैं ।

स्टुअर्ट मेक्ग्रेगर का जन्म और बचपन न्यूज़ीलैण्ड में बीता था, जहाँ उनके माँ–बाप पहले विश्व–युद्ध के बाद स्कॉटलैंड से आकर बस गये थे। वहाँ क्राइस्टचर्च के न्यूज़ीलैण्ड विश्वविद्यालय में स्टुअर्ट ने अंग्रेज़ी और फ्रांसीसी को विषय के रूप में चुना। उसके बाद उन्हें न्यूज़ीलैण्ड सरकार की तरफ़ से क़दीम अंग्रेज़ी की पढ़ाई जारी रखने के लिए ऑक्सफ़र्ड के मर्टन कॉलेज में छात्रवृत्ति मिल गयी और 1952 में वे इंग्लैंड के लिए रवाना हुए। उस ज़माने में ऑक्सफ़र्ड में ऐसे विद्यार्थियों को दूसरा बीए करना पड़ता था, और स्टुअर्ट ने भी ऐसा ही किया। उसके बाद उन्हें मर्टन कॉलेज की तरफ़ से अंग्रेज़ी की रिसर्च फ़ेलोशिप भी मिलने वाली थी, मगर उन्होंने तब लंदन के स्कूल ऑफ़ ओरिएंटल ऐंड अफ़्रीकन स्टडीज़ (सोआस) में जाकर हिंदी भाषा की पढ़ाई करने का निर्णय लिया। हिंदी के प्रति उनकी रुचि कैसे पैदा हुई थी, कहना मुश्किल है। बचपन में उनके एक रिश्तेदार ने उनको हिंदी सीखने की पुस्तक भेंट की थी जो फ़िजी के प्रवासी भारतीयों के बच्चों के लिए तैयार की गयी थी। शायद यही वजह रही होगी। सोआस में उनकी एलैन से मुलाक़ात हुई, जो अमेरिका से भारतीय इतिहास में पीएच.डी. करने आयी थीं। उन दोनों की शादी 1960 में कलकत्ते में हुई थी, जहाँ एलैन फ़ील्डवर्क के लिए गयी थीं, जबकि स्टुअर्ट इलाहाबाद के हिंदी विभाग में हिंदी भाषा और साहित्य पर अनुसंधान कर रहे थे। 1964 में उन्हें केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में नौकरी मिल गयी, और वे 1997 तक, यानी जब तक नौकरी से रिटायर नहीं हुए, वहीं काम करते रहे। केम्ब्रिज में उन्होंने बाक़ायदा हिंदी का पूरा प्रोग्राम खड़ा कर दिया, जो बहुत हद तक भारत के किसी हिंदी बीए से मिलता–जुलता था। पहले ही साल के दूसरे टर्म से विद्यार्थी हिंदी कहानियाँ (प्रेमचंद और उपेंद्रनाथ अश्क की) पढ़ना शुरू करते, दूसरे साल से *रामचरितमानस* और भारतेंदु का बलियावाला भाषण, आख़िरी साल में छायावाद (*कामायनी* का पहला सर्ग, महादेवी, पंत की लम्बी कविता *परिवर्तन...*), अज्ञेय, नागार्जुन, और पुरानी हिंदी में कबीर, सूरदास, तुलसीदास, मीराबाई और नंददास। कुछ ही साल पहले तक यह इंग्लैंड में हिंदी का अकेला बीए था। 1980 में स्टुअर्ट केम्ब्रिज के वोल्फ़सन कॉलेज के फ़ेलो बन गये।

जब उन्होंने पहले–पहल केम्ब्रिज में हिंदी पढ़ाना शुरू किया था, तब वह दौर था जब युरोप में इण्डोलॉजी (भारतविद्या) का मतलब संस्कृत और पाली से था, और स्टुअर्ट उन गिने–चुने विद्वानों में से थे जिन्होंने आधुनिक हिंदी भाषा और साहित्य को पढ़ाई और खोज के मान्य और स्वीकृत विषय बनाये। इस संस्थागत पुराणपंथ का नतीजा यह हुआ कि भारत के बाहर हिंदी के सबसे बड़े उस्ताद माने जाने के बावजूद स्टुअर्ट को कभी प्रोफ़ेसर नहीं बनाया गया।

जब उन्होंने पहले–पहल केम्ब्रिज में हिंदी पढ़ाना शुरू किया था, तब वह दौर था जब युरोप में इण्डोलॉजी (भारतविद्या) का मतलब संस्कृत और पाली से था, और स्टुअर्ट उन गिने–चुने विद्वानों में से थे जिन्होंने आधुनिक हिंदी भाषा और साहित्य को पढ़ाई और खोज का मान्य और स्वीकृत विषय बनाया। इस संस्थागत पुराणपंथ का नतीजा यह हुआ कि भारत के बाहर हिंदी के सबसे बड़े उस्ताद माने जाने के बावजूद स्टुअर्ट को कभी प्रोफ़ेसर नहीं बनाया गया। 1979 में उन्हें भारत सरकार की ओर से विश्व हिंदी पुरस्कार मिला, और 1983 में विश्व हिंदी सम्मलेन के दिल्ली अधिवेशन के अवसर पर उन्होंने सभापति का पद सुशोभित किया।

अगुआई करने वालों सभी लोगों की तरह, स्टुअर्ट को भी विद्यार्थियों के लिए हिंदी भाषा और साहित्य सीखने–सिखाने के मौलिक साधन तैयार करने पड़े। यह उनके विस्तृत ज्ञान का साक्ष्य है कि जितने व्यावहारिक साधन उन्होंने तैयार किये, वे सब के सब प्रामाणिक बन गये हैं और अब भी प्रयोग में हैं— उनका *हिंदी व्याकरण* (1972), ब्रज भाषा का वर्णनात्मक व्याकरण *(द लेंग्वेज ऑफ़*

इंद्रजीत ऑफ़ ओरछा (1968), *उर्दू स्टडी मैटेरियल* (1992), और *हिंदी-अंग्रेज़ी शब्दकोश* (1992)। शब्दकोश का काम यूँ शुरू हुआ था कि उनसे प्लात्ट्स के उन्नीसवीं सदी वाले हिंदुस्तानी के पुराने शब्दकोश को अपडेट करने को कहा गया। तब कम्प्यूटर प्रोग्राम नहीं थे जो ऐसे काम में मदद करें, और स्टुअर्ट और एलैन (जो बीच में शब्दकोशों की विशेषज्ञ बन गयी थीं), शब्द-पूँजी जुटाने में लग गये। जो इस शब्दकोश को दूसरे हिंदी-अंग्रेज़ी शब्दकोशों से अलग बनाता है, वह यह है कि उसमें मानक हिंदी के अलावा आपको बहुत सारे ऐसे शब्द मिलेंगे जो ब्रजभाषा, अवधी के हैं, या फिर रोज़मर्रे के, खेती-बाड़ी से संबंधित ढेर सारे ऐसे शब्द मिलेंगे जो शहरी हिंदी की परिधि के परे बहुत विस्तृत हिंदी-भाषी दुनिया की तरफ़ इशारा करते हैं।

इस नज़रिये से देखा जाए तो स्टुअर्ट मेक्ग्रेगर जॉर्ज ग्रियर्सन के सच्चे उत्तराधिकारी थे, जो न केवल लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ़ इण्डिया के कर्त्ताधर्ता थे, बल्कि जिन्होंने *अ ग्रामर ऑफ़ द बिहारी लैंग्वेजेज़*, *बिहार पेज़ॅन्ट लाइफ़* और *वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ़ हिंदुस्तान* भी लिखा था। आपको बहुत कम ऐसे शब्द मिलेंगे जो सिर्फ़ शब्दकोश बनाने वाले के ज़ेहन की उपज हैं— चूँकि ऐसा शब्द होना चाहिए, न कि है। कामिल बुल्के के अंग्रेज़ी-हिंदी शब्दकोश में, जो अपने में बहुत बड़ी उपलब्धि है, ऐसे शब्द भरे हुए हैं। अगर आप वहाँ से शब्द ढूँढ़ कर अपने लेखन में इस्तेमाल करें तो पढ़ने वाला सोचे कि यह भला क्या शब्द है?

मुझे अभी तक याद है, जब पहले-पहल *पद्मावत* को पढ़कर उनसे बात कर रही थी और अपनी हैरत प्रकट कर रही थी कि उसमें सारे के सारे शब्द अवधी के हैं, तो उन्होंने बस इतना कहा था : 'यही तो उनकी अपनी भाषा थी, वे वहाँ ही पैदा हुए थे।' मैं 'जब मुसलमान आये थे', 'अच्छे मुसलमानों ने हिंदी को अपनाया था' जैसे वाक्यों को सुन-सुन कर सचमुच भूल गयी थी कि जायसी जायस, ज़िला अमेठी में पैदा हुए थे, न कि ईरान या ख़ुरासान में। स्टुअर्ट के वे शब्द आज भी मेरे ज़ेहन में दर्ज हैं।

हिंदी साहित्य का इतिहास लिखने वालों में भी स्टुअर्ट मेक्ग्रेगर अगुआ रहे। हर्रासोवित्ज़ वाली नारंगी रंग की शृंखला के लिए दो जिल्दें जो उन्होंने तैयार कीं, वे महँगी और दुर्लभ तो हैं ही, मगर हाथ लग जाएँ तो उनको हाथ से निकलने न दीजिए (मगर पुस्तकालय से उन्हें मत चुराइए)। बहुत ही संक्षिप्त मगर प्रामाणिक ज्ञान से भरपूर, उनमें हर लेखक, रचना और साहित्यिक प्रवृत्ति का संतुलित और विद्वत्तापूर्ण अंकन मिलेगा। *हिंदी साहित्य का बृहद् इतिहास* दो जिल्दों में, एक बड़ा, एक छोटा। मेरे निजी अनुभव में जब भी किसी एक विषय पर कब किसने क्या लिखा था, यह पता करने के लिए उनको टटोलती हूँ, तो उनमें पूरे के पूरे संदर्भ मिल जाते हैं। उसके बाद आप बस संदर्भ ढूँढ़ कर पढ़ लीजिए, आपका काम आधा हो गया! पहले उन्होंने उन्नीसवीं सदी और बीसवीं सदी की शुरुआत को समेटा (1974)। यह छोटी और संक्षिप्त पुस्तक है, और उपयोगी होने के बावजूद उसमें आधुनिक हिंदी साहित्य की वही कहानी है जो बाक़ी साहित्येतिहास में मिलती है। 1984 में छपी दूसरी जिल्द, जो हिंदी साहित्य की शुरुआत से चलकर उन्नीसवीं सदी पर आकर रुकती है, भरपूर खज़ाना है। उसमें हिंदी साहित्य का चार-काल वाला इतिहास बहुत सारी दिशाओं में खुलता है— अपभ्रंश से लेकर जैन कवियों तक, सूफ़ी और ग़ैर-सूफ़ी कथाओं से लेकर, अनुवाद और टीकाओं तक ... 240 पन्नों में पता नहीं कैसे सब कुछ समेट पाये। किताब का आधार हिंदी विद्वानों की वह खोज थी, जो साठ और सत्तर के दशकों में विशेष रूप से हुई थी। फ़र्क़ इतना है कि यहाँ दायरा सचमुच बहुत बड़ा है और सब कुछ हिंदी-हिंदू की दृष्टि से नहीं आँका गया है। मुझे अभी तक याद है, जब पहले-पहल पद्मावत को पढ़ कर उनसे बात कर रही थी और अपनी हैरत प्रकट कर रही थी कि उसमें सारे के सारे शब्द अवधी के हैं, तो उन्होंने बस इतना कहा था : 'यही तो उनकी अपनी भाषा थी, वे वहाँ

ही पैदा हुए थे।' मैं 'जब मुसलमान आये थे', 'अच्छे मुसलमानों ने हिंदी को अपनाया था' जैसे वाक्यों को सुन-सुन कर सचमुच भूल गयी थी कि जायसी जायस, ज़िला अमेठी में पैदा हुए थे, न कि ईरान या ख़ुरासान में। स्टुअर्ट के वे शब्द आज भी मेरे ज़ेहन में दर्ज हैं।

हिंदी साहित्य के विकास को एक और ढंग से देखने का उनको फिर तब मौक़ा मिला जब शेल्डन पोलॉक ने उनको अपने प्रॉजेक्ट 'इंडियन लिटरेरी कल्चर इन हिस्ट्री' के लिए आमंत्रित किया। 'हिंदी की प्रगति' पर जो विद्वत्तापूर्ण लेख उन्होंने लिखा, उसमें प्रॉजेक्ट के अनुसार विशेष ध्यान शुरुआत, सामाजिक और राजनीतिक संदर्भ, और नये मोड़ों पर दिया। इस लेख में पंद्रहवीं सदी के तोमर राजाओं के ग्वालियर को विशेष महत्त्व दिया गया है, जिनके दरबार में विष्णुदास जैसे 'कवि' ने हिंदी में *महाभारत* और *रामायण* को अपने शब्दों में लिखा था। यह पुरानी हिंदी के साहित्य का सबसे संक्षिप्त और प्रामाणिक इतिहास है। स्टुअर्ट मेक्ग्रेगर के बहुत सारे लेख इधर-उधर के संकलनों में बिखरे पड़े हैं, और आशा है कि उनको एक जगह जमा करके निकालना सम्भव होगा। उन्हें परखने से पता चलता है कि उनकी सूझ-बूझ कितनी पक्की थी। चाहे विष्णुदास के रामायण-महाभारत हों या भिखारीदास का *काव्यनिर्णय,* ओरछानरेश राजा इंद्रजित द्वारा भर्तृहरि के *नीतिशतक* पर गद्य टीका या डच ईस्ट इण्डिया कम्पनी से जुड़े हुए विद्वानों के पहले का हिंदी शब्दकोश— इन सभी विषयों द्वारा उन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के इतिहास को नये आयाम दिये। आधुनिक हिंदी साहित्य में भारतेंदु हरिश्चंद्र (और उनके भाषा-प्रयोगात्मक नाटक *भारत दुर्दशा*) और नागार्जुन को ले कर भी उनकी रुचि शायद भाषाई और ऐतिहासिक दोनों थी।

आदमी के रूप में स्टुअर्ट संयमित और शांत मिज़ाज के थे, उसूल के बहुत पक्के। शायद अन्याय को देखकर ही वे ग़ुस्सा होते थे। जब भी कोई विद्यार्थी या युवा साथी-सहयोगी उनसे मिलकर अति-उत्साहित होता, तो वे चकित-जैसे लगते, जैसे अपनी औक़ात उन्हें ख़ुद न मालूम हो। भाषा के अलावा उन्हें पहाड़ पर घूमने और शास्त्रीय संगीत सुनने का बहुत शौक़ था। दुर्भाग्य से जब भाषा के शब्द उनके ज़ेहन से लुप्त हो चुके थे, उस समय भी संगीत सुन कर और न्यूज़ीलैण्ड के भव्य पहाड़ों को देखकर उन्हें शांति मिलती थी। मुझे केम्ब्रिज में स्टुअर्ट की उत्तराधिकारी होने का अवसर मिला और मैंने उन्हें कई बार ऐसे चौंकते हुए देखा। हालाँकि शुरू में मेरी और उनकी रुचि में काफ़ी फ़र्क़ था, पर आगे चल कर मैंने पाया कि जहाँ-जहाँ मेरी जिज्ञासा मुझे ले गयी, वहाँ स्टुअर्ट पहले ही पहुँच चुके थे और मेरा पथ-प्रदर्शन कर रहे हैं। उनका काम इतना मज़बूत और दूरंदेश है कि बहुत दिनों तक हमारा पथ-प्रदर्शन करता रहेगा।